© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 09 , Issue : 01 | January - March 2023

अल् का वेदत्वम्

रीटा देवी
शोध–छात्रा, संस्कृत विभाग
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक
डॉ. तरुण
सहायक प्राध्यापक, संस्कृत विभाग
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक

अल्वेद संवादशैली और महाभाष्य के समान शंका और समाधान रूप में विरचित किया गया है । सर्वप्रथम मथुरादेवी अपनी शंकाएं प्रस्तुत करती हैं और कहती हैं कि चतुर्दश प्रत्याहार सूत्र व्याकरण शास्त्र के हैं । इन चौदह सूत्रों में आदि अक्षर अकार तथा अन्तिम लकार है अल् प्रतयाहार इस प्रकार कथन करने से (उपदेशेऽजनुनासिक इत्, हलन्त्यम्, आदिरन्त्येन संहेता) पाणिनि सूत्रों की सहायता से मध्यवर्ती अक्षरों का भी ग्रहण हो जाता है ।[1] लेकिन प्रत्याहार वेद कैसे हो सकता है? वेद तो केवल चार माने गये हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ।[2]

पण्डित नीरजनाभ इन सभी शंकाओं/प्रश्नों का समाधान करते हुए अल्वेद के वेदत्व को विभिन्न प्रमाण देकर सिद्ध करते हैं ।

वेद शब्द का उत्पत्ति एवम् अर्थ :

वेद शदि विद् धातु से बनाया गया है विद् धातु विभिन्न अर्थों में प्रयोग होता है यथा विद् ज्ञाने, विद् विचारणे, विद् सत्तायां, विद् विद्यते। परंतु लेखक द्वारा चुरादिगण की विद् धातु[3] जिसके चेतन, आख्यान और निवास ये तीन अर्थ विद्यमान हैं उस विद् धातु से करण और अधिकरण कारक में टलश्च[4] सूत्र द्वारा घञ् प्रत्यय करने से वेद शब्द सिद्ध होता है अन्य किसी धातु द्वारा नहीं। जो सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म, स्वयं चेतन है और सकल भूतों में अन्तर्यामी है सकल भूतों का निवास स्थान तथा सम्पूर्ण शास्त्रों को कहने वाला है वह वेद है ।[5]

अल् का वेदत्व :

प्राचीन जो भी शास्त्र है वह सम्पूर्ण सूत्ररूप में विरचित है यथा :– गौतम का न्यायशास्त्र, कणाद का वैशेषिकशास्त्र, कपिल का सांख्यशास्त्र, पतंजलि का योग शास्त्र, व्यास का वेदान्त शास्त्र एवं जैमिनि का मीमांसा शास्त्र

---

1. अल्वेद प्रथम मण्डलम द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र–1–3 (भगवन्विस्मयो जातः श्रुत्वाल्वेदं तवाननात्। ततोऽपि द्विगुणो मोहः श्रुत्वा ह्यर्थस्य सङ्गतिम्।।, व्याकरणास्य सूत्राणि ह्येतानि नव पंच च। द्रष्टव्यं पाणिनिप्रोक्तं व्याकरणं त्वयानघ।।, एषामादावकारोऽस्ति लकारश्चवसानगः। अल् ग्रहणेन गृह्यन्ते सर्वे वर्णाश्च मध्यगाः।।)
2. तदेव मन्त्र (4–6) (एतत्सर्वं विजानामि नातवेदस्तु श्रुतो मया। कथं मोहयसि तं मां नास्य वेदत्महर्हति।।, वेदास्तु सन्ति चत्वारोमाननीया मनीषिणाम्। ऋग्वेदस्तु यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।। विष्णोश्च जज्ञिरे वेदा यजुर्वेदे प्रकीर्तिताः। एकत्रिंशत्तमेऽध्याये मन्त्रे च सप्तमेऽनघ।।
3. विद चेतनाख्यान–निवासेषु चुरादिगण आत्मनेपद।
4. पाणिनि अष्टाध्यायी 3/3/121
5. अल्वेद प्रथममण्डलम् चतुर्थोऽध्यायः मन्त्र 19 (यः स्वयं चेतनं ब्रह्म निवासः सर्वदेहिनाम्। व्याख्याता सर्वशास्त्राणां स वेदः परिकीर्तितः)

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 09 , Issue : 01 | January - March 2023

। क्योंकि सभी का उपादान कारण अल्वेद भी सूत्रबद्ध ही विद्यमान है ।[6] लौकिक, वैदिक और शास्त्रीय व्यवहारों में यदि किसी प्रकार का संदेह हो जाये जो व्याख्यान से विशेष बात का निश्चय कर लेना चाहिये ।[7] केवल संदेह मात्र से अल्वेद के सूत्रों को व्याकरण के सूत्र नहीं मानना चाहिए । अल्वेद के 14 सूत्र अनादि हैं, पाणिनि व्याकरण शास्त्र के नहीं हैं । महर्षि पाणिनि ने केवल अष्टाध्यायी की रचना की है । यह चौदह सूत्र अष्टाध्यायी में नहीं हैं ।[8] वेद एक ही माना गया है जिसका नाम अल्वेद है इसी को विद्वानों ने अक्षरसमाम्नाय और वाक्समाम्नाय कहा है ।[9] ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद चारों वेद अल्हेद से ही बनाये गये हैं ।[10] महायशस्वी व्यास जी को स्वतः ही सम्पूर्ण वेदों और उस परमात्मतत्त्व का ज्ञान प्राप्त हो गया, जिसे कोई तपस्या, वेदाध्ययन, व्रत, उपवास, शम और यज्ञ आदि के द्वारा भी नहीं प्राप्त कर सकता । वे वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ थे और उन्होंने एक ही वेद को चार भागों में विभक्त किया था । ब्रह्मर्षि व्यास जी परब्रह्म और अपरब्रह्म के ज्ञाता, कवि (त्रिकालदर्शी), सत्य व्रतपरायण तथा परम पवित्र हैं ।[11] अल्वेद की महत्ता का वर्णन करते हुए उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित सन्दर्भ को लिया उसमें कहा गया है कि श्री व्यास जी ने यज्ञों का विस्तार करने के लिए एक ही वेद के चार विभाग कर दिये गये ।[12] अल् एक अनाहत नाद है जिसकी उपासना कान बंद करके की जाती है ।[13] मनुष्य को दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों कानों के छिद्र बंद करके निर्जन स्थान में बैठकर शरीर के अंदर होने वाले 'अल्', 'अल्' इस अनाहत नाद का श्रवण करना चाहिये ।[14] इसी अनाहत नाद की उपासना से योगीजन अपने आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक मल को कम्पायनमान करके परम पद पा लेते हैं ।[15] उस अनाहत नाद से परमात्मा का नाम ओङ्कार उत्पन्न हुआ और वह

---

6. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 13–14 (गौतमस् कणादस्य कपिलस्य पतंजलेः। व्यासस्य जैमिनेश्चापि दर्शनानि षडेव हि।।, पूर्वानि यानि शास्त्राणि सूत्रबद्धानि तानि वै। सूत्रबद्धो यतोऽल्वेदो विद्यते नात्र संशयः।।)
7. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 10 (व्याख्यानतो विशेषस्य प्रतिपर्त्तिर्न संशयः। भवति नहि सन्देहाल् लक्षणं किन्त्वलक्षणम्।। अथवा व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिर्नहि संदेहादलक्षणमिति महाभाष्य अ॰ 1/पा॰1/आ॰1)
8. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 11 (एतानि सन्ति सूत्राणि ह्यनादीनि चतुर्दश।
9. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 15 (एक एव मतो वेदः स चाल्वेदः पुरातनः। तयाक्षर समाम्नायो वाक्समाम्नयसंज्ञकः।।)
10. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 18 (ऋग्वेदस्तु यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। एते वेदास्तु चत्वारो ह्यल्वेदादेर जज्ञिरे।।)
11. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 18 एवम् महाभारत आदिपर्व । अध्याय 60 श्लोक 4, (ऋग्वेदस्तु, यजुर्वेदः सामवेदो हाथर्वणः। एते वेदास्तु चत्वारो ह्यल्वेदादेव जज्ञिरे।।, विव्यासैकं चतुर्धा यो वेदं वेदविदांवरः। परवरज्ञो ब्रह्मर्षि कविः सत्यव्रतः शुचिः।।)
12. श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध अध्याय–4 पृ॰ 61 (चातुर्होत्रं कर्म शुद्धं प्रजानां वीक्ष्य वैदिकम।व्यदधाद्यज्ञसन्तत्यै वेदमेकं चतुर्विधम्।।)
13. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 21 (समाहितात्मनो वाले ब्रह्मणः परमेष्ठिनः। हृदाकाशदभून्नादो वृत्तिरोधाद्विभाव्यते।।)
14. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 22 (तर्जनीभ्यां पिधायोभे कर्णच्छिद्रे समाहितः। शृणुयान्निर्जने देशे नादमन्तर्गतं जनः।।)
15. अल्वेद प्रथममण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 23 (यदुपासनया कान्ते योगिनो मलमात्मनः। द्रव्यक्रियाकारकाख्यं धूत्वा यान्त्यपुनर्भवम्।।)

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 09 , Issue : 01 | January - March 2023

ओङ्कार ही सब शास्त्रों का सनातन बीज है ।[16] ओङ्कार अक्षरसमाम्नाय के अंतर्गत है । इसीलिए अल्वेद ही सर्वोत्तम वेद है ।[17]

अक्षर ब्रह्म एवम् अक्षरसमाम्नाय से अल्वेद की साम्यताः

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद यह चार वेद हैं जिनके छः अङ्ग हैं :– शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छन्द, व्याकरण, ज्योतिष । चारों वेद और वेदांग इन सबको अपरा विद्या कहा जाता है । दूसरी परा विद्या है जिससे अक्षरब्रह्म का ज्ञान होता है अक्षर ही सनातन है ।[18] मुण्डकोपनिषद् में अल्वेद का विचार है ।[19] पूर्वकाल में अकार और हकार नामक दो गुरु और शिष्य थे मुण्डकोपनिषद् में उन दोनों का ही अल्वेद विषयक विचार है ।[20] गुरु ने अक्षर को ही ब्रह्म कथन किया और ब्रह्मचारी को अक्षर में दृढ़विश्वसस दिलाने के लिये अक्षर को जानने वाले ब्रह्मा आदि देवताओं का वर्णन किया गया है । शोनक ने अंगिरा से अलः अक्षरों को पूछा । 'ह' ने 'अ' से पूछा कि वह कौन–सा ज्ञान है जिसके जानने से सब जाना जाता है । परा विद्या वह विद्या है जिससे अक्षर ब्रह्म का बोध होता है ।[21] पण्डित नीरजनाभ शास्त्री ने 'महाशालः' (महागृहस्थ का वाचक) इस शब्द का महाश और अलः यह पदच्छेद करके कहा कि अल्वेद ही परा विद्या है, जिससे वह अक्षर ब्रह्म जाना जाता है।[22] उस परब्रह्म परमात्मा को जिसका नाम अक्षर है जानने के लिये अल्वेद अथवा अक्षरसमाम्नाय ही साधन है ।[23] यह अक्षरसमाम्नाय ब्रह्मराशि है जो प्रत्येक मनुष्य के जानने योग्य है तथा इसके यथार्थ ज्ञान में सम्पूर्ण वेदों का फल प्राप्त होता है और इसके माता–पिता स्वर्ग लोक में सदा उन्नति लाभ करते हैं ।[24]

पण्डितनीरजनाभ शास्त्री ने अल्वेद के वेदत्व को सिद्ध करते हुए बृहदाण्यकोपनिषद् के मंत्र का कथन किया है[25] कि जैसे सब जलों का एक समुद्र ही आश्रय होता है और सब स्पर्शों का एक त्वक्, सब रसों की एक जिह्वा सब गन्धों का एक घ्राण, सब रूपों का एक चक्षु सबशब्दों का एक श्रोत्र, सब संकल्पों का एक मन, सब विधाओं का एक हृदय (बुद्धिः) सब कर्मों का एक हस्त सब आनन्दों का एक अपस्थ, सब मलों के त्याग का एक वायु, सब मार्गों का एकपाद और सब वेदों का एक 'अल्वेद' ही आश्रय है ।[26] लेखक अल्वेद के वेदत्व को सिद्ध करते हुए कहते हैं

---

16. तदेव मंत्र 24 (ततोऽभूत्त्रिवृदोङ्कारो वाचकः परमात्मनः। स एव सर्वशास्त्राणां बाले बीजं सनातनम्।।)
17. तदेव मन्त्र 25 (स चाक्षरसमाम्नाये विद्यते नात्र संशयः। अतोऽक्षरसमाम्नायमसृजद् भगवानजः।।)
18. अल्वेद प्रथममण्डलम् तृतीयोऽध्यायः मन्त्र (मुण्डकस्थापि मन्त्राभ्यां पराविद्योत्तमा मता। यया चाक्षरभानं स्याद् अक्षरं हि सनातनम्।।)
19. तदेव मन्त्र 7 (अल्वेदस्य–विचारोऽत्र तृतीये मन्त्र ईरितः। त्वया न ज्ञायते बाले विद्वज्जनमोहरे।।
20. मुण्डकोपनिषद् मुण्डक । मन्त्र 3 (शौनको ह वै महाशालोऽगिरसंविधिवदुपसन्न, पमच्छ। कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति।।)
21. अल्वेद प्रथममण्डलम् तृतीयोऽध्यायः (मन्त्र 10–15)
22. तदेव मन्त्र–21–22 (अलेखिष्यद्यदि भाष्ये हकारं शंकरोऽनघे। महाशेति ह्यलश्चेति तदाच्छेत्स्यत्स मानिनि।।) इत्यादिभिर्विचारैश्च निश्चिनोनि मुहुर्मुहुः। अल्वेदो हि परा विद्या मया ब्रह्म प्रकाशते।।22।।
23. तदेव मन्त्र 23 (तुलायां तोलनं यद्वत तुल्यभारेण गम्यते। अक्षरमक्षरेणैव ज्ञायते नात्र संशयः।।)
24. तदेव मन्त्र 26 (ब्रह्मराशिरितिबोध्यः सर्ववेदफलप्रदः।अनेन पितरावस्य महीयेते सदा दिबि।।)
25. अल्वेद प्रथममण्डलम् तृतीयोऽध्यायः मन्त्र 31 (बृहदारण्यकेऽत्रैव मन्त्रे ह्येकादशेऽनघे। सर्वेषामेव वेदानां सा वागेकामनं मतम्।।)
26. बृहदारण्यकोपनिषद् अध्याय 2 ब्राह्मण–4 मन्त्र।। (स यथाः सवासामपां समुद्र एकायनमेवं सर्वेषां स्पर्शानां त्वगेकापनमेव सर्वेषां गन्धानां नासिके एकायनमेवं सर्वेषां संकल्पानां मन एकायनमेवं सर्वासां विद्यानां हृदयमेकायनमेवं सर्वेषां कर्मणां हस्तावेकायनमेवं सर्वेषामानन्दानामुपस्थ एकायनमेवं सर्वेषां विसर्गाणां पायुरेकायनमेवं सर्वेषामध्वानां पादावेकायनमेवं सर्वेषां वेदानां वागेकायनम्।)

ISSN : 2454 – 308X | Volume : 09 , Issue : 01 | January - March 2023

कि अल्वेद में 57 अक्षर विद्यमान हैं, निरुक्त के कर्ता यास्काचार्य ने 57 नाम वाणी के बनाये हैं ।[27] इसीलिए अल्वेद को वाक्समाम्नाय भी कहा गया है । नीरजनाभ स्वयं ही शंका एवं समाधान प्रस्तुत करते हैं । मथुरादेव कहती हैं कि छान्दोग्योपनिषद् में 5 वेद[28] एवं तीन वेदों[29] का कथन है । इसके अतिरिक्त मनुस्मृति में तीन वेद[30] तथा शतपथ ब्राह्मण में भी तीन वेदों[31] का ही कथन है । तदनन्तर नीरजनाभ कहते हैं कि वेद तो केवल एक ही है वह 'अल्वेद' है ।[32] महाभारत के वन पर्व में भी हनुमान एवं पांडव भीम के सम्वाद में लिखा है कि एक वेद ही था ।[33] ऋग्वेद की रचना के समय नदियां 'अल्', 'अल्' करती हुए वह रही थी ।[34] इसीलिए अल्वेद सम्पूर्ण वेद शास्त्रों का अधीश्वर है ।[35] यह बात निश्चित है कि बिना प्रत्यय के ही पूर्व और उत्तर पद का विकल्प से लोप हो जाता है ।[36]

अल्वेद का यज्ञरूप में वर्णन :

'यज्ञ' शब्द की उत्पत्ति एवम् अर्थ :

पण्डितनीरजनाभ कहते हैं कि यज्ञ और अल्वेद में बहुत समानता है । अल्वेद को ही यज्ञ नाम से कथन किया गया है ।[37] नीरजनाभ यज्ञ का लक्षण बताते हैं और कहते हैं कि यज्ञ सम्पूर्ण कर्मों में श्रेष्ठ कर्म है और सम्पूर्ण

---

27. निरुक्त नैगम कांड अध्याय 2 खंड 23 (वाङ्नामान्युत्तराणि सप्तपञ्चाशत् ।)
28. छान्दोग्योपनिषद् अध्याय 7, खण्ड मंत्र–2 (सहोवाचर्ग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चम वेदानां वेदं पित्र्यं राशि दैवं निधिं वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां चत्रविद्यां नक्षत्रविद्यां सर्वदेवजनविद्यामेतद्भगवोऽध्येमि ।
29. तदेव अध्याय 4 खंड 17 मन्त्र 2 (स एतास्तिस्त्रो देवता अभ्यतपत्तासां तप्यमानानां रसात्प्रावृहदग्नेर्ऋचो वायोर्यजूंषि सामान्यादित्यात् ।)
30. मनुस्मृति अध्याय–1, श्लोक 23 (नानृग्वेद्विनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः । नासासवेदविदुषः शक्यमेवं विभाषितुम् ।
31. शतपथ ब्राह्मण कांड 11, अध्याय 5, ब्राह्मण 2 मंत्र 1, 2, 3 (प्रजापतिर्वाऽइदमग्रऽआसीत् । एक एव सोऽकामयत स्यां प्रजायेयेति सोऽश्राम्याम्त्स तपोऽतप्यत तस्माच्छन्तात्रेपनात्त्रयोलोका असृज्यन्त पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः ।स इमांस्त्रींलोकानाभि तताप । तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रीणि ज्योतीष्यजायन्ताग्निर्योग्यंपवते सूर्यः ।2 । स इमानि त्रीणि ज्योतींष्यभितताप । तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः13)
32. अल्वेद प्रथममण्डलम् तृतीयोऽध्यायः मन्त्र 43 (एको वेदस्तु विज्ञेयः स चावेदः सनातनः । नाल्वेदादपरो वेदः कश्चिद्वेदत्वमर्हति ।।)
33. महाभारत वनपर्व अध्याय 149 श्लोक 14, 20 (न साम ऋग्यजुर्वर्णाः क्रिया नासीच्च मानवी । अभिध्याय फलं तत्र धर्मः संन्यास एव च ।।14 ।। एकदेवसादायुक्ता एकमन्त्रविधिक्रियाः । पृथग्धर्मास्त्वेकवेदा धर्ममेकमनुव्रताः ।20)
34. अल्वेद प्रथममण्डलम् तृतीयोऽध्यायः मन्त्र 47 (ऋग्वेदस्तु यदा सृष्टो वामदेवोऽशृणोध्वनिम् । अल्वेदोऽल्वेद इत्येवं शब्दं चक्रुः सरिद्वराः ।।)
35. तदेव मन्त्र 48 (सोऽल्वेदो विदितादन्यस्तथैवाविदितादपि । सर्वेषां वेदशास्त्राणां कल्पितानामधीश्वरः ।।
36. तदेव मन्त्र 49 (विनापि प्रत्ययं बाले पूर्वस्य चोत्तरस्य च । पदस्यापि विकल्पेन लोपो भवति निश्चितम् । यथा देवदत्तः – दतः या देवः । सत्यभामा – भामा या सत्या । इसी प्रकार अल्वेदः – अल् या वेदः । ठामादावूर्ध्वं द्वितीयादचः 5/3/83 विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तरपदयोर्वा लोपो वाच्यः ।)
37. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र–2 अल्वेदं याज्ञिका यज्ञ वदन्ति नात्र संशयः । अल्वेदे च तथा यज्ञे विशेषो नास्ति कश्चन ।।

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 09 , Issue : 01 | January - March 2023

शुभ कर्मों का कारण है ।[38] यज धातु[39] से नङ् प्रत्यय[40] करने पर यज्ञ शब्द निष्पन्न होता है । जहां देवताओं का पूजन और महात्मा पुरुषों की संगति होती है और सब प्रकार के दान दिये जाते हैं वह यज्ञ है ।[41] प्राचीन ऋषि मुनियों ने चतुर्दश सूत्रात्मक अल्वेद रूप यज्ञ को ही सर्वोत्तम कथन किया है ।[42]

यज्ञ शब्द के वेद प्रतिपाद्य अर्थ :

यज् धातु का अर्थ देवपूजा आदि लोक और वेद में प्रसिद्ध ही है; ऐसा निरुक्त के विद्वान् कहते है; अथवा जिस कर्म में लोग यजमान से अन्नादि की याचना करते हैं; अथवा यजमान ही देवताओं से वर्षा आदि की प्रार्थना करता है, अथवा देवता ही यजमान से हवि की याचना करते हैं, उस कर्म को 'यज्ञ' कहते हैं अथवा कृष्ण यजुर्वेद के मंत्रों की जिसमें प्रधानता हो उसे यज्ञ कहते हैं । यज्ञ में यजुर्वेद के मंत्रों काअधिक उपयोग होता है ।[43]

यज्ञ का लक्षण :

जिस कर्म विशेष में देवता, हवनीय द्रव्य, वेदमंत्र, ऋत्विज और दक्षिणा – इन पांचों का संयोग हो, उसे यज्ञ कहते हैं ।[44]

यज्ञ के दो भेद होते हैं – एक यज्ञ और दूसरा महायज्ञ । जो अपने ऐहिक तथा पारलौकिक कल्याण के लिए पुत्रेष्टियाग और विष्णुयागादि करते हैं, उन्हें 'यज्ञ' कहते हैं और जो विश्वकल्यार्थ 'पंचमहायज्ञ' आदि करते हैं उन्हें 'महायज्ञ' कहते हैं । यज्ञ का फल आत्मोन्नति तथा आत्मकल्याण है । महायज्ञ का फल जगत् का कल्याण है । वेदों में अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन मिलता है, किंतु उनमें निम्नलिखित पांच प्रकार के यज्ञ प्रधान माने गये हैं ।[45] गौतमधर्मसूत्रकार[46] ने पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ और सोमयज्ञ भेद से तीन प्रकार के यज्ञों का भेद दिखलाकर प्रत्येक के सात–सात भेद बताकर 21 प्रकार के यज्ञों का उल्लेख किया है । इसमें स्मार्त्त सात पाकयज्ञ संस्थाओं का उल्लेख गृह्यसूत्रों और धर्मसूत्रों में मिलता है ।उपर्युक्त 14 वैदिक यज्ञ तथा 7 पाकयज्ञ के अतिरिक्त गृह्यसूत्र और धर्मसूत्रों में पंचमहायज्ञों का भी उल्लेख किया गया है, जो कि नित्यकर्म और आवश्यक अनुष्ठेय माने गये हैं । सभी प्रकार के यज्ञ सात्त्विक, राजसिक और तामसिक भेद से तीन प्रकार के कहे गये हैं । जो यज्ञ निष्काम भाव से किया जाता है उसे 'सात्विक यज्ञ'[47] कहते हैं । जो यज्ञ सकाम अर्थात् किसी फल विशेष की इच्छा से किया जाता है उसे 'राजसिक

---

38. शतपथ ब्राह्मण कांड । अध्याय–7 ब्राह्मण । मन्त्र 5 (यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।)
39. भ्वादिगण । उभयपदी यज वेदपूजासंगतिकरणदानेषु।
40. पाणिनि अष्टाध्यायी 3/3/90 (यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षोनङ्)
41. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 7 (पूजनं यत्र देवानां सङ्गतिश्च महात्मनाम् ।दानं च सर्व वस्तूनां स यज्ञः परिकीतितः।।)
42. तदेव मन्त्र 8 (अल्वेदो हि परो यज्ञो मुनिभिः परिकीर्तितः। नाल्वेद–सदृशो यज्ञः कश्चिद्भवितुमर्हति।
43. निरुक्त 3/4/19 (यशः कस्मात्? प्रख्यातं यजति कर्मेति नैरुक्ताः। याच्ञ्यो भवतीति वा यजुर्भिर्रुन्नो भवतीति वा, बहुकृष्णाजिन इत्यौयमन्यवः यज्ष्येनं नयन्तीति वा।)
44. मत्स्यपुराण 144/44 (देवानां द्रव्यहविषां ऋक्सामयजुषां तथा। ऋत्विजां दक्षिणानां च संयोगो यज्ञ उच्यते।।)
45. ऐतरेयब्राह्मण (स एष यज्ञः पंचविधः – अग्निहोत्रम्, दर्शपूर्णमासौ, चातुर्मास्यानि, पशुः, सोमः इति।
46. गोत्तमधर्मसूत्र 8/18 (औपासनहोमः, वैश्वदेवम्, पार्वणम्; अष्टका, मासिकश्राद्धम्, श्रवण, शलगव इति सपत पाकयज्ञसंस्थाः। अग्निहोत्रम्, दर्शपूर्णमासौ, आग्रयणम्, चातुमस्यिा, निरूढपशुबन्धः, सौत्रामणी, पिण्डपितृयज्ञादयो दर्विहोमा इति सप्तर्यज्ञसंस्थाः। अग्निष्टोमः, अत्यग्निष्टोमः, उक्थ्यः, षोडशी, वाजपेयः, अतिरात्र, आप्तोर्याम इति सप्त सोमसंस्थाः।
47. श्रीमद्भगवद्गीता 17/11 (अफलाकांक्षिमिर्यज्ञो विधिइष्टो य इज्यते। यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः।।)

यज्ञ'[48] कहते हैं । जो यज्ञ शास्त्रों के विरूद्ध किया जाता है । उसे 'तामसिक यज्ञ'[49] कहते हैं । इनमें सात्विक यज्ञ का अनुष्ठान का अनुष्ठान सर्वोत्तम कहा गया है । अतः यज्ञ का मुख्य उद्देश्य सात्त्विकाता को लेकर ही होना चाहिए। शास्त्रों में सात्त्विक यज्ञ का महान् फल लिखा है । श्रौत–स्मार्त्तादि सभी प्रकार के यज्ञों में कुछ यज्ञ नित्य, कुछ नैमित्तिक और कुछ काम्य होते हैं । उनमें नैमित्तिक और काम्य यज्ञ करने के लिए तो द्विज स्वतन्त्र हैं अर्थात् वह अपनी श्रद्धा–भक्ति तथा आर्थिक परिस्थिति के अनुकूल यज्ञ करें अथवा न करें, किन्तु नित्यज्ञ तो करना ही होगा । उसनित्यज्ञका नाम 'पंचमहायज्ञ' है ।

यज्ञ की प्राचीनता[50] :

प्राचीन धर्मग्रंथ वेद हैं । वेदों में कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड इन तीनों विषयों का मुख्यतः वर्णन मिलता है, किन्तु इन तीनों में प्रधान स्थान 'कर्मकाण्ड' को ही प्राप्त है । इसीलिये वेदों में यज्ञ–यागादि विविध क्रिया–कलाप का विशेषरूप में वर्णन मिलता है । अतः यज्ञ ही वेदों का मुख्य विषय है । वेदों का मुख्य विषय यज्ञ होने के कारण ही यज्ञों में वेद–मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है । वेद मंत्रों के बिना यज्ञ नहीं हो सकते और यज्ञों के बिना वेद–मंत्रों का ठीक–ठीक सदुपयोग नहीं हो सकता । अतः स्पष्ट है कि वेद हैं तो यज्ञ हैं और यज्ञ हैं तो वेद हैं ।

महर्षि जैमिनि ने कहा है कि धर्म ही वेद का एकमात्र प्रतिपाद्य अर्थ हैं, यह स्पष्ट किया है ।[51] मानव–जाति के जीवन का प्रारंभ यज्ञ से ही होता है । अतः मानव के लिये यज्ञ बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं । गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने यज्ञ को मनुष्य के लिए इष्टकामधुक् बताया है ।[52] यज्ञ में सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी भगवान् का निवास रहता है ।[53] आसक्तिरहित होकर यज्ञ करने से मनुष्यकृत समस्त बन्धनों का नाश हो जाता है ।[54] श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान ने यज्ञादि कर्म को अत्यन्त पवित्र बताया है ।[55]

अल्वेद रूपी यज्ञ में देवताओं का वर्णन :

मथुरादेव प्रश्न करती हैं कि यदि अल्वेद यज्ञरूप हैं तो इस अल्वेद रूप यज्ञ में सवन और छन्द कौन–कौन से हैं और देवता कौन से हैं ।[56] नीरजनाभ कहते हैं कि अल्वेद में 57 अक्षर हैं अर्थात् चतुर्दश प्रत्याहार सूत्रों में अल् प्रत्याहार में 57 अक्षर (अ इ उ ण् ऋ लृ क् ए ओ ङ् ऐ औ च् ह य वर ट् ल ण् ञ म ङ ण न म् झ भ ञ् घ ढ घ ष् ज ब ग ड द श् ख फ छ ठ थ च ट त व् क प य् श ष स र् ह ल्) हैं, इनमें 9 अच् और 33 हल् हैं, 14 इत्संज्ञक वर्ण हैं जो प्रत्येक सूत्र के अन्त में विद्यमान हैं, 15वां हल् हकार है जो हयवरट्/5/हल्/14) सूत्रों में अकार वाला

---

48. तदेव 17/12 (अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत्। इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञ विद्धि राजसम्।।)
49. श्रीमद्भगवद्गीता 17/13 (विधिहीनमसृष्टानं मन्त्रहीनमदक्षिणम्। श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते।)
50. यज्ञ–मीमांसा, पृ॰ 9
51. यज्ञमीमांसा, पृ॰ 59
52. श्रीमद्भगवद्गीता 3/10–11 (सहयज्ञाः प्रज्ञाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः। अनेन प्र–सविष्यध्वमेषवोऽस्त्विष्टकामधुक् 1110।। देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः। परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।11।।
53. तदेव 3/15 (तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञं प्रतिष्ठितम्।)
54. तदेव 4/23 (गतसंगस्य मुक्तान्य ज्ञानवस्थितचेतसः। यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते।।)
55. तदेव 18/5 (यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।)
56. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 11 (सवनानि च छन्दांसि यज्ञेऽस्मिन्कानि कानि वै। के देवाः कानि नामानि तेषां च वद मेऽनघ।।)

है; इस प्रकार सब 48 हल् हैं ।[57] वैदिक साहित्य में भी 33 देवता माने गये हैं ।[58] बारह आदित्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र और दो अश्विनीकुमार – ये तैंतीस कोटि (तैंतीस प्रकार के) देवता सम्पूर्ण देवताओं में मुख्य हैं, ये सब देवता भगवान् के समग्र रूप के अंतर्गत हैं।[59] पण्डित नीरजनाभशास्त्री जी ने अक्षरों के अद्वितीय महत्त्व को दर्शाते हुए सम्पूर्ण अल् प्रत्याहार को यज्ञस्वरूप मानकर उनमें वर्णित अचों और हलों को देवतारूप माना है । उनके द्वारा दी गई दृष्टि का वर्णन इस प्रकार हैः–

33 हलों में आठ अक्षर ऐसे हैं (म, फ, छ, ठ, थ, त, प, स) जिनका प्रत्याहार सूत्रों में दो बार प्रयोग नहीं किया गया है ।[60] आठ अक्षरों को आठ वसु माना है । आठ अक्षर के छन्द को गायत्री कहते हैं और आठ वसु इस में देवता हैं (पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य चन्द्रमा और नक्षत्र)[61] । इसी को प्रातः सवन भी कथन किया गया है । यथा :– 1. म (नक्षत्राणि), 2. फ (चन्द्रमा), 3. छ (द्यौः), 4. ठ (आदित्यः) 5. थ (अन्तरिक्षम्), 6. त (वायुः), 7. प (पृथिवी), 8. स (अग्निः) ।[62]

इन 33 हलों में ही एकादश हल और भी हैं जिनका प्रत्याहार सूत्रों में दो बार प्रयोग नहीं हुआ है । (न, झ, भ, घ, ढ, ध, ज, व, ग, ड, द)[63]। एकादश अक्षर के छन्द को त्रिष्टुप् कहते हैं । एकादश रुद्र इसमें देवता है (5 प्राण–प्राण, अपान, समान, उदान, और व्यान । 5 उपप्राण–नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनंजय। 11वां जीवात्मा है ।[64] वेद शास्त्रों के ज्ञाता इसी को माध्यन्दिन सवन कहते हैं ।[65] इसके अतिरिक्त अल्वेद में द्वादश हल् ऐसे भी हैं, जो दो–दो सूत्रों में हैं और उनकी इत्संज्ञा भी नहीं है (य, व, र, ल, ञ, म, ङ, च, ट, क, श, ष) ।[66] 12 अक्षर के छन्द को जगती कहते हैं, द्वादश आदित्य यहां पर देवता है (12 अक्षर के लिए 'आदित्याः' शब्द है ।वर्ष के 12 मास के विभिन्न सूर्य माने जाते हैं । अत सूर्य 12 हो जाते हैं । वर्ष के 12 मास हैं – चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण,

---

57. तदेव मन्त्र 12–14 (अल्वेदे सप्तपंचाशदक्षराणि स्थितानि वै। नवाचश्च त्रयस्त्रिंशद्धलः सन्ति न संशयः।।12।। हलः पञ्चदशान्येऽत्र येषामिश्चतुर्दश। द्वि सूत्रगो हकारोऽयमकारेण समन्वितः।।3।। इत्थं नागयुगाः सन्ति हलः सर्वेऽत्र मानिनि। त्रयस्त्रिंशद्यथा देवाः सन्ति बाले तथा श्रृणु।।14।।)
58. महाभारत वन पर्व 3 अध्याय/4 श्लोक 19 (त्रयस्त्रिंस्त्रद्यथा देवाः सर्वे शुक्रपुरोगमाः। संपूज्याः सर्वलोकस्य तथा वृद्धाविमौ मम।।19।।
59. श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय–11 श्लोक–6 (पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा। बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत।।)
60. अल्वेढ़ द्वितीय मण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 15 (विवाराश्चाथ्ज्ञ श्वासश्च ह्यघोषाश्च खरोमताः। वसवोऽष्टौ हलस्तेऽत्र ये सन्ति द्वि सूत्रगाः।।)
61. पिंगल कृत छन्द सूत्रम् पृ॰ 36, 3/3 (गायत्र्या वसवः।।)
62. अल्वेद द्वितीय मण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 16 (अष्टाक्षरा च गायत्री वसवस्तत्र देवताः। प्रातः सवनमित्युक्तं मुनिभिर्वेद पारगैः।।)
63. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 18 (संवाराश्चाथ नादाश्चघोषाश्चापि हशो मताः। एकादश हि रुद्रास्ते नो ये सन्ति द्विसूत्रगाः।।)
64. पिंगल कृत छन्दः सूत्रम् पृ॰ 3/6 (त्रिष्टुभो रुद्राः।।)
65. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 19 (एकादशाक्षरा त्रिष्टुप रुद्राश्च तत्र देवताः। माध्यन्दिनं तथा वाले सवनं नात्र संशयः।।)
66. तदेव मंत्र 21 (हलो द्वादश विद्यन्ते ये चाल्वेदे द्विसूत्रगाः। आदित्यास्ते तु विज्ञेया ये हीत्संज्ञा विवर्जिताः।।)

भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ फाल्गुन ।[67] इसी को तृतीय सवन भी कहा है ।[68] चतुर्दश प्रत्याहार सूत्रों में णकार का प्रयोग तीन सूत्रों में (अइउण्, लण्, अमङणनम्) है । हकार को प्रजापति माना है क्योंकि वह हलों के आदि और अन्त में स्थित हैं और दोनों स्थानों में अकार के सहित हैं ।[69] इस प्रकार 33 देवता (8+11+12+1+1=33) हैं । इस चतुर्दश सूत्रात्मक अल्वेद रूप यज्ञ में 'अच्' पुरुष और 'हल्' स्त्रियां हैं और जो अकेले अकेले अक्षर हैं, वह ब्रह्मचारी कथन किये हैं ।[70] हकार आदि में जो अकार हैं, वह सब देवताओं के वाचक पुल्लिंग हैं ओर वह अकार जिन हलों के साथ पढ़े जाते हैं । वह उन देवताओं की नारियां स्त्रीलिंग हैं ।[71] ऋग्वेद में भी सपत्नीक, सहित नारियों के 33 देवता कथन किये हैं ।[72]

नीरजनाभ शास्त्री के अनुसार हवनमन्त्र :

नीरजनाभ शास्त्री कहते हैं कि सर्वत्र हवन करने में अल्वेद के चतुर्दश मन्त्रों के द्वारा हवन करना चाहिए यथा[73] – अइउण् ।। स्वाहा ।। ऋलृक् ।। स्वाहा ।, एओङ् ।। स्वाहा ।, हयवरट् ।। स्वाहा ।, लण् ।। स्वाहा ।, ञमङणनम् ।। स्वाहा ।, झभञ् ।। स्वाह ।, धढघष् ।। स्वाहा ।, जबगडदश् ।। स्वाहा ।, खफछढथचटतव् ।। स्वाहा ।, कपय् ।। स्वाहा ।, शषसर् ।। स्वाहा ।, हल् ।। स्वाहा ।। अग्निहोत्र से सब जगह में पत्नी वाले 33 देवता तृप्त हो जाते हैं ।[74] इसके अतिरिक्त महर्षि पराशर ने भी सब जगह जहां कहीं भी यज्ञों में हवन की आवश्यकता समझी, वहीं सर्वत्र अल्वेद का आश्रय लेकर अन्य ही 14 मंत्रों को कथन किया है ।[75] मथुरादेवी कहती हैं नीरजनाभ जी ने

---

67. पिंगल कृत छन्दः सूत्रम् पृ॰ 37 (3/4) (जगत्या आदित्याः।।)
68. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 22 (एवं च मुनिभिः प्रोक्ता जगती द्वादशाक्षरा। आदित्या देवतास्तत्र तृतीयं सवनं भवेत्।।)
69. द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 23 (इन्द्रोणकार इत्यत्र यतोऽस्ति स जिसूत्रगः। आदावन्ते हलां यश्च स हकारः प्रजापतिः।।)
70. तदेव मन्त्र 24 (अत्राचो मनुजाः सन्ति स्त्रियः सन्ति हलस्तथा) एकाकिनस्तु ये सन्ति ते सन्ति ब्रह्मचारिणः।।)
71. तदेव 25 (हकारादिष्वकारा ये ते सर्वे सुरसंज्ञकाः। हलस्तु योषितस्तेषां विद्यन्ते नात्र संशयः।।
72. ऋग्वेद मण्डल 3, सूक्त 6, मन्त्र 9 (ऐभिरग्ने सरथं याहयर्वाङ् नानारथं वा विभवो ह्यश्वाः। पत्नीवतस्त्रिंशतंत्रींश्च देवाननुष्वधमावह मादयस्व।।)
73. द्वितीयमण्डलम् प्रथमोऽध्यायः मन्त्र 27 (अइउण् ।1। आदिभिर्मन्त्रैः हल् । 14। अन्तैर्नव पञ्चभिः। अग्निहोत्रं तु कर्त्तव्यं सर्वत्र होमकर्मणि।।)
74. तदेव मन्त्र 28 (अग्निहोत्रेण सर्वत्र यज्ञे ताराधिपानने। पत्नीवन्तस्त्रयस्त्रिंशद्देवास्तृप्य– न्त्य संशयम्।।)
75. तदेव मत्र 29 (पराशरोऽपि सर्वत्र यज्ञेषु होमकर्मणि। भणत्यल्वेदमाश्रित्य मन्त्रानन्यांश्चतुर्दश।। होमकर्मणि पराशरः। अघारावाज्यभागौ च महाव्याहृतयस्तथा। सर्वप्रायश्चितसंज्ञा पंचैवाहुतयस्तथा।1। प्राजापत्यं स्विष्टकृतोऽग्नेर्होमश्च सर्वतः होमकर्मण्याहुतीनां चतुर्दशकमीरितम्।2। सर्वतः होमकर्मणि सर्वत्र यत्र होमोविहितस्तत्र सर्वत्र एतादाहुतीनां चतुर्दशकमवश्यं समुदीरितमस्तीत्यर्थः। तथाहि । ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं सोमाय इत्याज्यभागौ ।।4।। ॐ भूः स्वाहा, इदं भूः ।।5।। ॐ भुवः स्वाहा, इदं भुवः ।।6।। ॐ स्वः स्वाहा, इदं स्वः इति महाव्याहृतयः।।7।। ॐ त्वन्नाऽग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठा यजिष्ठौ वह्नितमः शोशुचानो विश्वाद्वेषसिं प्रभु–मुग्ध्यस्मत्स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्याम्।। ॐ सत्वन्नेग्नेऽवमो भवोतीनोदिष्टोऽस्या उषसो व्युष्टौ अवयक्ष्वनो वरुणरराणो व्रीहि मृडीकसुहवो न एथि स्वाहा। इदमग्नीवरूणभ्याम्।।2।। अयश्चानेस्य नमिशस्तिपाश्च

33 देवताओं का वर्णन एवं विभाजन बहुत अच्छी प्रकार दर्शाया है ।[76] इनका श्रवण करके भी आनंद की अनुभूति हुई है ।[77] इस अल्वेद में पहले किसका पूजन करना चाहिए क्योंकि यज्ञ में सभापति का ही सत्कार किया जाता है ।[78] 33 देवताओं के विवेचन के बाद अविनाशी सच्चिदानन्द नाम वाले साक्षात् सनातन ब्रह्म का वर्णन है जिसको अक्षर और आत्मा कहते हें ।[79] जैसे दुग्ध से नवनीत अलग कर लेते हैं वैसे ही उस परब्रह्म परमात्मा कैसे देवताओं से अलग हैं उसी का वर्णन नीरजनाभ द्वारा किया गया है । नीरजनाभ कहते हैं कि जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में द्वितीया तिथि को आकाश में चन्द्रमा को और अरुंधती तथा ध्रुव को और जैसे वृक्ष की शाखा पर छुपकर बैठे हुए पक्षी को दिखला देते हैं वैसे ही आकाश में चन्द्रमा के समान अवश्य ही उस अविनाशी परमात्मा का दर्शन करवा दूंगा ।[80] अलवेद नामक यज्ञ में ब्रह्मा आदि से लेकर सम्पूर्ण देवता विद्यमान हैं।[81] अल्वेद के नौ अचों की तुलना ज्योतिष शास्त्र के 9 अंकों की तरह अथवा नौ अवतारों की तरह अथवा आकाश में स्थित 9 ग्रहों से की गई है ।[82] अल्वेद में 48 हल् हैं जिनमें से जो हल स्वरों के साथ मिले हुए हैं वह 34 हैं और ब्रह्म आदि देवता 33 हैं ।[83] अल्वेद नामक यज्ञ में जो हल् केवल एक ही सूत्र में हैं वह 19 हैं ।[84] झ भ ।8। घ द ध । 9। जब ग ड द ।10। ख फ छ ढ थ त ।11। प।12।स।13।) । अल्वेद में अच् और हल् गिनती में 28 हैं जिनका केवल एक बार प्रयोग किया गया है ।[85] (अ इ उ।1। ऋ लृ ।2। ए ओ ।3। ऐ औ ।4। न।7। झ भ।8। घ ढ ध ।9। ज ब ग ड द ।10। ख फ छ ठ थ त ।।1।। प । 12। स । 13।)

सत्यमित्वमया असि अमानो यज्ञं वहास्यमानो धेहि भेषजस्वाहा, इदमग्नये।।3। ये ते शतं वरुण येसहस्रं यज्ञिया पाशा विताता महान्तस्तेभिर्नोऽद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः।।4।। उदुत्तमं वरुण पाशुमस्मद बाधमं विस्मयम् श्रथाय अथावयमादित्य व्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणाय। एताः सर्वप्रायश्चित्तसंज्ञकाः ।।5।। ॐ प्रजापतये स्वाह, इदं प्रजापतये । इति मनसा ।।6।। अथ स्विष्टकृद्धोमः । ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नयो स्विष्टकृते ।।7।। अथ पूर्णाहुतिः।।)

76. अल्वेद द्वितीय मण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 1 (पत्नीवन्तस्त्रयस्त्रिंशद् देवाः सम्यक्त्वयोदिताः। नूनमित्संज्ञकास्तेषां हलः सन्ति विभाजकाः।।)
77. तदेव मंत्र 2 (वसवश्च तथा रुद्रा आदित्साश्च श्रुता मया। इन्द्रः प्रजापतिश्चैव श्रुत्वानन्दो महानभूत्।।)
78. तदेव मन्त्र 3 (यज्ञेऽस्मिन्पूजनं कस्य कार्यमादौ मयानघ। पूज्यते हि सदा यज्ञे प्रधानः प्रथमं यतः।।)
79. तदेव मन्त्र 4 (साहमक्षरमात्मानं साक्षाद् ब्रह्म सनातनम्। सांप्रतं द्रष्टुमिच्छाभि सच्चिदानन्दमव्ययम्।।)
80. तदेव मन्त्र 8–9 (दर्शयन्ति यथाचन्द्रमाकाशेऽरुन्धतीं यथा । दक्षिणं वृक्षशाखाया अथवा ध्रुवमम्बरे।।8।। तथाक्षरमहं त्वां हि दर्शयिष्यामि मानिमि। येन सृष्टमिदं सर्वं जगदेतच्चराचरम्।।9।।)
81. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 10 (अत्राल्वेदे स्थिताः सर्वे ब्रह्माधास्त्रिदिवौकसः। पृथक्पृथम्विराजन्ते सूत्रे मणिगणा इव।।)
82. तदेव मन्त्र 12 (नवाचो ह्यत्रतिष्ठन्ति नवाङ्का ज्यौतिषे यथा। अवतारा यथा भान्ति ग्रहावाथ नावम्बरे।।)
83. तदेव मन्त्र 14 (हलो नागयुगाः सन्ति चतुस्त्रिंशत्तु तन्तवः। राद्धान्ते तु त्रयस्त्रिंशद ब्रह्माघास्त्रिदिवौकसः।।)
84. तदेव मन्त्र 15 (एकैकसूत्रगन्तारो ब्रह्मन्नेकोनविंशतिः। यानाश्रित्याभवर्त्सख्या कृतकृत्या न संशयः।।)
85. तदेव मन्त्र 18 (अष्टाविंशतिरित्यत्र तौ भान्ति भान्ति खे यथा। अज्झलोर्मध्यगो ब्रह्मन् नकारो नाज्झलाविव।।)

इस अल्वेद नामक यज्ञ में अकार, नकार, सकार यह तीन अक्षर ही मुख्य हैं क्योंकि इस अल्वेद में जो 19 हल दो–दो सूत्रों में नहीं हैं, उनमें से पहला नकार और अन्तिम सकार है ।[86] सांख्य और योग के जानने वाले तो उस सकार को ही परमात्मा मानते हैं और अल्वेद के जानने वाले उस सकार को अग्नि देवता कहते हैं ।[87] नीरजनाभ के मतानुसार सांख्यदर्शन अध्याय तीन में छपनवें सूत्र में सकार को ही ईश्वर माना गया है ।[88] सांख्यदर्शन में कहा गया है कि यदि प्रकृतिरूपी पदार्थ को सर्वत्र और सर्ववित् सर्वशक्तिमान मान लिया जाए तो क्या हानि है?[89] वेद के प्रमाणों से ईश्वर की सिद्धि सिद्ध है । प्रकृति में सर्वज्ञत्वादि गुण तो किसी सूरत में नहीं हो सकते हैं, सर्वज्ञत्वादि गुण तो ईश्वर ही में हैं ।[90] नीरजनाभ के अनुसार पतंजलि योगदर्शन के प्रथम पाद के छब्बीसवें सूत्र में पतंजलि ने सकार को ही ईश्वर बताया है ।[91]

---

86. अल्वेद द्वितीयमण्डलम् द्वितीयोऽध्यायः मन्त्र 24–25 (अक्षराणीह विद्यन्ते मुख्यानि त्रीणि कामिनि। अकारश्च नकारश्च सकारश्चेति तांश्छृणु।।, येषां हलां द्विरुक्तिर्नो ह्यलेदे परिकीर्तिता। नकारात्स्वादिमस्तेषु सकाराश्चावसानगः।।)
87. तदेव मन्त्र 26 (सांख्ययोगौ सकारं हि मन्येते जगदीश्वरम्। अल्वेदवादिनो बाले तं मन्यन्तेऽग्निदेवताम्।।)
88. तदेव मन्त्र 27 (षट् पञ्चाशत्तमे सूत्रे पश्य त्वं सांख्य–दर्शने। तत्राध्याये तृतीये हि सकार ईश्वरो मतः।।)
89. सांख्यदर्शन अध्याय–3, सूत्र 56 (स हि सर्ववित्सर्वकर्ता।।) (पृ॰ 101)
90. तदेव सूत्र 57 (ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा।।) पृ॰ 102
91. तदेव सूत्र 58 (षट् विंशे च तथा सूत्रे पादे तु प्रथमेऽनघे। पतंजलिः स्वयं प्रवाह पश्य त्वं योगदर्शने।।)